स्वतंत्रता, समानता के लिए संघर्षरत साथियों को।

क्योंकि वह ज़िन्दा है

कविता संग्रह

सरल विशारद



कलासन प्रकाशन

कल्याणी भवन,

मॉडर्न मार्केट, बीकानेर

प्रकाशक :



✆ : 0151-526890

कलासन प्रकाशन

कल्याणी भवन, मॉडर्न मार्केट, बीकानेर

•

मुख्य वितरक : कामेश्वर प्रकाशन
तेलीवाड़ा चौक, बीकानेर-5 [राज.]
✆ 0151-524330

•

प्रथम संस्करण : जनवरी, 1996

मूल्य : सत्तर रुपये मात्र

मुद्रक : कल्याणी प्रिंटर्स, बीकानेर (राज.)

आवरण-सज्जा : पारस भंसाली

Kayon Kee Waha Jinda Hai (Poetry)
By Saral Vishard Price 70/- Page 80

अपनी ओर से......

एक तरफ से देखें तो इस विशाल पृथ्वी पर रहने वाले विविध प्रकार के जीवों और उन्हें जीवित रखने वाले समृद्ध प्राकृतिक पर्यावरण के सामने मनुष्य की क्या विसात! कितना छोटा, अदना और अकिंचन है वह। दूसरी तरफ आदमी की महत्ता का प्रतिपादन करने के लिए महाभारतकार ने लिखा है कि 'मनुष्य से श्रेष्ठ और कोई नहीं।' बात अपनी जगह सही है। मनुष्य के पास अन्य प्राणियों की तुलना में अधिक बौद्धिक क्षमता है। इसीलिए आज पृथ्वी पर अन्य प्राणियों की तुलना में उसी का राज है। पहले वह अन्य ताकतवर प्राणियों के सामने कमजोर और बौना था। ऐसे में उसे सबके साथ की जरूरत थी। सामाजिकता और सहयोग की भावना ने मनुष्य को सामूहिक ताकत और चेतना दी। उसमें पारस्परिक त्याग, प्रेम और सद्भावना जागी। सुखी व शांत जीवन उसकी कामना थी। न कोई छोटा था, न कोई बड़ा। समता का साम्राज्य था।

आज वह परिदृश्य बदल गया। हम अनेक प्रकार की दीवारों और खाँचों में बँट गए। त्याग और समर्पण स्वाहा हो गए। समता का भाव तिरोहित हो गया। मनुष्य ही नहीं पूरा समाज, शासन तंत्र और व्यवस्था- सब की चाल बदल गई। ऐसे में व्यक्ति का जीवन कैसा नारकीय और विषादग्रस्त बन गया! व्यक्तिवाद के अंधड़ ने सामाजिकता के संस्कारों की होली जला दी। आत्मकेन्द्रितता और बेगानापन इस छोर से उस छोर तक व्याप्त हो गया।

ऐसा नहीं कि पृथ्वी पर मानव प्रेम, त्याग, समर्पण, शांति और समता के मूल्यों का कोई नामलेवा भी न रहा हो। कई मनीषियों के विचारों ने पृथ्वी को स्वर्ग तुल्य सुंदर, समृद्ध एवं सुखी बनाने की दृष्टि दी है। बल्कि ऐसे कई आंदोलन भी चले हैं जहाँ पददलितों और मेहनतकशों को शोषण से मुक्ति दिलाकर सुखी जीवन जीने की सुंदर व्यवस्था दी है। अच्छे विचार कभी नहीं मरते और सभी लोग रोटी के लिए, अपने पेट और अपने परिवार के लिए जिंदा नहीं रहते। आज हालात बदल गए हैं। हममें से लाखों-करोड़ों लोग शोषण के शिकार हैं। उनके साथ अन्याय होता है। मौत आसान हो गई है और जीना दूभर। देखते सब हैं, पर सब विवश हैं। ऐसे माहौल में उपजी ये कविताएँ मेरे निजी अवलोकन और अनुभवों की परिणतियाँ हैं।

'मैं जो कहता हूँ उसे तू लिख और मुझसे भी बड़ा दिख।' बड़ा तो मैं नहीं बन सका, लेकिन लिखा वही जो उसने लिखने को कहा- वह जो मेरा समय है- मेरी परिस्थितियाँ, मेरा परिवेश और मेरी ज़मीनी सच्चाईयाँ। वे जैसा-जैसा मुझे कहती गईं मैं "खामोशी के रंगों" से उकेरता हुआ "क्योंकि वह ज़िंदा है" की सच्चाईयों तक पहुँच पाया हूँ, राह कठिन है चलना सहज सरल है, यात्रा जारी है।

संग्रह में आपको भाषाई पहाड़, झरने, देवदार, बादलों के चित्र, रसवंती वर्षा नहीं मिलेगी बल्कि एक सपाट दरकती हुई धरती मिलेगी, जहाँ कहीं-कहीं कोई फुनगी नजर आ जाए तो आश्चर्य न करें। यह भी ज़मीनी सच्चाई है। मै ऐसी ही ठोस-सच्चाई से रुबरु होते हुए उसका 'कहा' उसी की जुबानी आप तक पहुँचाता रहा हूँ। आपकी पसंद और पहचान कैसी है, आप ही बता सकते हैं। प्रतिक्रिया मुझ तक पहुँचेगी तो और निखार आयेगा— बात कहने के अंदाज में, मिजाज में।

"क्योंकि वह जिन्दा है" की जल्दी जिल्दसाजी में मेरे प्रेरक रहें हैं स्नेही मित्र एम. एम. कल्याणी एवं भाई रामनरेश सोनी। ये नहीं होते तो "वह जिन्दा" नहीं मिलता और मेरी बेटी अणिमा नही होती तो यह नाम नहीं मिलता मैं सभी स्नेहीजनों का आभारी हूँ कि "क्योंकि वह जिन्दा है" काव्य संग्रह आपके सामने है। इत्यलम्।

गोपेश्वर बस्ती
बीकानेर (राज) -सरल विशारद

अनुक्रम

आदमी अकेला

होता है आदमी अकेला
दुःख में पीड़ा में
सूखी नदी-सा
सुन्दर और प्रशान्त।

खोया खोया-सा
भीतर से किन्तु
रोया-रोया-सा
एकांत
नम आँखों-सा
काँटों में
गुलाबों-सा
होता है आदमी
अकेला दुःख में पीड़ा में।

पीड़ा का पैगम्बर होता है
अँधेरी आँधियों में
टिम-टिमाता दीपक
दिखाता है राह
ढाँकता अभावों के पहाड़
दिखती नहीं है
पीड़ा के पेड़ की
हिलती पत्तियाँ, डालियाँ
जड़ों तक जमा होता है दर्द।

दर्द में आदमी
जंगल के मोर-सा होता है
नाचना जिसका कोई
देख नहीं पाता है।
होता है आदमी अकेला
दुःख में पीड़ा में
आदमी ही होता है
अकेला दर्द में।



हर बार

हर बार
सोचता हूँ
बादल बरसेंगे
धरती हँसेगी
हरा-भरा होऊँगा
रूपली के हाथों
मेंहदी रचेगी
गंगू को गाँव से बाहर
पढ़ाने भेजूँगा

आँधियों से लड़ती
सब कुछ झेलती
अपनी कम्मो के लिये
जयपुर की चूनडी ला दूँगा
लक्स से नहाऊँगा
पड़ौसी के घर
लड्डू भेजूँगा

साहूकार का कर्ज और
सरकारी किस्त चुकाऊँगा
किन्तु हर बार
पड़ जाता है अकाल
तड़क जाती है धरती
सावन-भादों की आँधियों से

पोस-मास की ठिठुरन
बाहर आती है
हर बार की तरह
बिना छप्पर के रात गुजारता हूँ
अच्छे दिनों की आशा में
जागता हूँ रात-रात भर
हर बार।



फूल और बच्चे

खिलते हैं फूल
खिलने दो
तोड़ो मत
तोड़ना अपराध है।

खिले हुए फूलों को देखो
फूल को आँख बनाओ
नाक और कान बनाओ
खिलखिलाहट महसूसो
सुगंध सुनो।

समर्पित होती तितलियों को
पकड़ो मत
तोड़ो मत
खिलते हुए फूलों को
तोड़ना अपराध है।

फूल झरते हैं, झरने दो
प्रकृति का स्वभाव है।
झरे हुए फूलों से गोद भरो
प्रिया के जुड़े
साजन की सेज भरो।
शहीदों की वेदी

देवों के शीश चढ़ाओ
झरे हुए फूलों को,
फैंको मत फूलों को
बच्चों के हाथ थमाओ
हम-उम्र खूब खिलेंगे
खिलने दो
तोड़ो मत, रोको मत

खिले हुए फूलों को
खेलते हुए बच्चों को
तोडो मत, डाँटो मत
तोड़ना
डाँटना
अपराध है।



आर्त्तनाद

कभी भी
मेरी आँख में
आँसू नहीं उतरा,
आज
भीग ही गई निगोड़ी,
आईने का
पानी उतर गया,
कौन समझेगा
अब
उसका आर्त्तनाद
जो
युगों से
पलकों की कोरों में
दबा
कसमसा रहा था
आँख का आँसू।



ग़ज़ल

हर जख्म पै मरहम किया है मैंने,
यूँ कलेजे को छलनी किया है मैंने।

उनकी उल्फ़त को इबादत माना है मैंने,
यूँ जमाने को दुश्मन बनाया है मैंने।

उनके घर को ही अपना घर समझा मैंने,
यूँ दर-दर का खुद को बनाया है मैंने।

इक इशारे पर अरमान हवा हो गये,
उनकी नज़रों में यूँ कातिल बनाया मैंने।

जिनकी रगों में रमा है लहू मेरा,
उन्हीं की नफ़रत को पाया है मैंने।

जमाने के सरताज कहलाते जो हैं
गर्दिश में उनको गले लगाया है मैंने।

खुदगर्ज है दुनिया खुदगर्ज हैं लोग,
खुदगर्जी को खुद ही ठुकराया है मैंने।



ग़ज़ल

जिनकी गिर रही थी छतें
वे घर हमें मिले।

जिनके बिखर रहे थे पर
वे कबूतर हमें मिले।

हो रहे थे जो लापता ज़माने में
खोजते घर-घर हमें मिले।

जिन्हें पूछता नहीं था कोई
वे ही हमारे परिचित निकले।

न खत्म हो सिलसिला कभी
ऐसे ही दर्द मुँह-बाये मिले।

जिस जिस सफ़र में हम निकले
लोग उलझे हुए परेशाँ ही मिले।

हुजूम में रहने की तमन्ना थी
तन्हा लोगों के काफ़िले मिले।

ज़िद थी हँसेगी ज़िंदगी इक दिन,
जब भी मिले उदास उदास मिले।

न हारेंगे हम जुल्म ढाते रहो।
जीने के यों हजार बहाने मिले।

दुनिया निर्मम होती

रो मत बेटी
दुनिया निर्मम होती।
ललचाई आँखें
तकती है सपने
मोहब्बत के गमले में
नागफनी-से अपने
अपनो की बरछी से
डर मत बेटी।

सीधे से लोगों की
बाँकी-सी करतूतें
गेंदे की कलमों में
काँटे हैं अकूते।
कुदरत का खेल देख
सो मत बेटी।

मंजिल तो आँखों में
गर्दिश में राहें
चलना है तुझ को
थाम मेरी बाँहें।
कल तो अपना है
थक मत बेटी।

काली रातों के
दिन है उजाले।
आँसू से धो ले
आँखों के प्याले।
विषपायी मैं हूँ
तू मत पी बेटी।

रोने से दृष्टि
होती है धुँधली
रातों में दिन की
परछाँई हिलती।
भरमों के जाल यहाँ
फँस मत बेटी।

तट की नादानी
लहरों को सहनी है।
सपनों की शैतानी
अपने को कहनी है।
कथनी का बोझ कभी
ढो मत बेटी।
रो मत बेटी
दुनिया निर्मम होती।



अरी ज़िंदगी

अरी ज़िंदगी
क्या-क्या रंग दिखाये तूने!

भरी दुपहरी सूरज डूबा
बात-बात में दर्पण टूटा।
आँखों में सपने थे कल के
सजी सेज और कंगन टूटा।

भरी कचहरी कत्ले-आम
न्याय को सूँघ गया है साँप
घर में घुस कर शील हरण
रक्षक करें अपहरण।

कदम उठे तो पथ गायब था
खुली आँख तो सब गायब था
गाने को आतुर था जब मैं
कंठों में से स्वर गायब था।

जीत-जीत कर हार रहा हूँ
अकड़-अकड़ कर टूट रहा हूँ
मैं हूँ ऐसा बाण अनोखा
छूट-छूट कर टूट रहा हूँ।

अब क्या और पढूँगा बोलो
आँसू है आँखों की पोथी;
किस किस को कैसे दिखलाऊँगा
मैं हूँ बंद दर्द की कोठी।

एक सूरज

लम्बी
घनेरी रात
अँधेरा कर रहा उत्पात
बदनीयत तूफान
हवाएँ
मिलाती
मृत्यु से गलबाँह
हर दिशा दहशत
कर्फ्यू भोगता इन्सान
संगीनों की सीध में
उगता एक सूरज
अकेला एक सूरज
देखता हारा थका इन्सान
इस हाहाकार में
काली ताकतों के प्रहार में
एक दीपक टिमटिमाता कह रहा
मत डरो
अँधेरे से लड़ो
कल सुबह
इस दिशा से
उस दिशा से
एक सूरज
लाल सूरज आएगा
हर गली हर घर
सुहानी धूप से
भर जाएगा।

बसन्त

आग आग है
दिशा दिगंत
कैसे मनायें प्यारा बसंत।

आमों के पेड़ों पर झूले हथियार
बरगद की छाँव तले सुस्ताते सियार।
फूलों की क्यारी में गोला बारूद
सांपिन-सी लगती फागुनी बयार।
त्रिशूली चादर में
साधु और संत
कैसे मनायें प्यारा बसंत।

हँसती-खिलती औरत रोती
महँगाई को भाग्य समझती।
अँधियारे को समझ रोशनी
पत्थर पै सिर मारा करती।
जड़ता के जंगल में
जीवन का अंत
कैसे मनायें प्यारा बसंत।

देश तभी बौना लगता जब
माथे में मजहब चढ़ जाता।
हँसी प्यार और भाईचारा,
कहाँ-कहाँ फिर धूल फाँकता।
धूल धूल आँधी बसंत
कैसे मनायें प्यारा बसंत।

याद करो तो आँसू आते
पीड़ा से जन्मों के नाते।
सुधि सपनों के मौसम में भी
जंगल कैसे क्यों उग आते।
फागुन भी अगहन-सा लगता
याद नहीं आते हैं कंत
कैसे मनायें प्यारा वसंत।

चौराहे पर पड़ी मनुजता
बूटों से कुचली जाती है।
लाठी जिसके हाथ बड़ी है
भैंस साथ उसी के जाती है।
संस्कृति का ये कैसा अंत
कैसे मनायें प्यारा वसंत।

तलाश

मेरे घर में आग लगी है
तेरे घर में आग
माचिस वाले हाथों की
मुद्दत से तलाश।

किसने चमन उजाड़ा सारा
कौन खड़ी करता दीवार
किसने मेरे आँगन में
तुमको दी है भद्दी गाल।
कौन सिरफिरा भूख फेंकता
कौन बढाता प्यास?
माचिस वाले हाथों की
मुद्दत से तलाश।

साथ साथ दोनों रहते हैं
जैसे खेत में खाद और पानी।
दोनों को अखरा करती है
सावन-भादों की नादानी।
किसने जलन उगाई
कौन तोड़ता जीवन-आस
माचिस वाले हाथों की ?
मुद्दत से तलाश।

चाहे तेरा मेरा भाई
या मजहब का पहरेदार।
चाहे कोई जन प्रतिनिधि हो
या कोई थैली-सरदार।
अमन तिजोरी सेंघ लगाता
चाहे कोई खासमखास।
माचिस वाले हाथों की
मुद्दत से तलाश।

हवालात में न्याय बंद है
रक्षक कारागारों में।
शील हरण सत्ता का होता,
मर्यादा के नारों में।
कौन धर्म की ध्वजा उठाए
रोक रहा संसद की साँस?
माचिस वाले हाथों की
मुद्दत से तलाश।

थामे हाथ कदम ताल पे
अमन तराना गाना है।
आज़ादी आँखों की पुतली,
हर पल इसे बचाना है
शैतानों के जंगल में
भाई चारा भरे उसाँस।
माचिस वाले हाथों की
मुद्दत से तलाश।



पहली बार

पहली बार
मैं तोड़ा और बेचा जा रहा हूँ
अपने ही लोगों द्वारा

बेचा तो पहले भी गया
कौड़ियों के भाव
तोड़ा भी गया पहले
जातियों के नाम
तोड़कर चले जाते थे पहले
खरीददार
खून चूस-चूसकर घर लौट जाते थे

आज
जो मुझे बनाते हैं
वे ही तोड़ते हैं
अपने ही लोग
कौड़ियों के मोल
घर-बुलाकर खरीददार को
बेचते हैं मुझे
समझौता-संधियाँ करते
पहचान गिरवी रखते

मैं अब वतन नहीं
वस्तु हो गया हूँ

तोड़ा-मरोड़ा और बेचा जा रहा हूँ
मैं हिन्दुस्तान हूँ

सुनो भगतसिंह
मेरी आवाज सुनो
पहली बार पुकार रहा हूँ
मैं फिर गुलाम बनाया जा रहा हूँ
पहली बार
मैं
तोड़ा और बेचा जा रहा हूँ।

ॐ

लोग

लोग ठंडे हैं
और ठंडे होते जा रहे हैं
मैं कविता पढ़ता हूँ
ये मुझे ताकते जा रहे हैं
न हिलते
न हरकत करते
सूने और ठठ होते जा रहे हैं
हलाल किये जाते हैं
कौड़ों से पीटे जाते हैं
देखते-देखते
जिन्दा जला दिये जाते हैं
पल भर में

ढहा दिये जाते हैं झोंपड़े-छप्पर
पूजा और धर्मस्थल
और खड़ी कर दी जाती है
भाई और भाई के बीच
एक अभेद्य दीवार

मैं करता हूँ प्रतिरोध
वे झुक जाते हैं हर ठौर
मैं मुट्ठियाँ तानता हूँ
वे प्रार्थना में डूब जाते हैं
जुल्म के खिलाफ़

खामोश-अदालत जारी रखते हैं
आस्था के नाम
इतिहास ढोते
इतिहास बिगाड़ते हैं

मैं कविता पढ़ता हूँ
लोग मुझे ताकते हैं
क्या कविता बेअसर
और लोगों की समझ
दुरुस्त होती जा रही है
बदलाव के पड़ाव पर
कविता की मौजूदगी
नकारी जा रही है।

नहीं-नहीं
ताकने वाली आँखें कहती
कविता आदमी की
पहली और आखिरी जरूरत है
जड़ता को तोड़ती
धारदार छैनी है
मैं कविता तराशता हूँ
लोग खुद को तलाशते हैं
संभावित विस्फोट की प्रतीक्षा में
कविता को तौलते हैं

लोग अब
ठंडे नहीं, गर्म
और गर्म होते जा रहे हैं

मैं कविता पढ़ता हूँ
लोग मुझे सुनते समझते जा रहे हैं
बदलाव के बादलों में
कौंधती रोशनी
महसूस करते जा रहे हैं
लोग बर्फ नहीं
लावा बनते जा रहे हैं।



आदमी की फितरत

ऐसे मौसम में
खामोश नहीं रहा जा सकता
आग हो सामने,
बाँस वन और तेज हवा हो
तो नहीं हुआ जा सकता
पत्थर।

हरकत करता ही है इन्सान
खतरे उठाता ही है आदमी
खतरों से खेलना
हासिल करना मुकम्मल कामयाबी
फितरत है आदमी की;
संन्यासी भी असंयमित हो जाता है
गेरुआ गृहस्थी बन जाता है
आग जब सामने हो
खामोश नहीं रहा जाता।

पंचभूती पुलिंदा
नहीं डरता किसी से
महाबली
एक चिंनगारी से भभक जाता है
बली बाल हो जाता है
आग का रंग ही ऐसा होता है
पत्थर भी दहक जाता है

तपा हुआ सोना
कुंदन हो जाता है
खतरों में आदमी खरा होता
खुदा होता है
खतरे के किसी भी दौर में
खामोश नहीं रहा जाता।

मुकाबला किया जाता है
या
किनारे हुआ जाता है
तुम खतरा तो नहीं हो
आग और पानी हो
दूर तुम से नहीं हुआ जाता
ऐसे में
खामोश नहीं रहा जाता
इन्सान की फितरत है
हरकत करना।



क्या फ़र्क़ पड़ता है

क्या फ़र्क़ पड़ता है
मैंने किसी का दिल तोड़ दिया
तुमने बेच दिया
किसी का दिल
तोड़ना-बेचना
साख है
बाजारू संस्कृति की।

यहाँ न कोई किसी का बेटा है
न किसी का बाप,
सभी रिश्ते
महज एक वस्तु है
चीज़ है
बेचना खरीदना ही खास है
यही साख है
बाजारू सभ्यता की ।

नाहक ही तुम
पीछे पड़े हो
कविता के
बेची और खरीदी जाने वाली
चीज़ नहीं यह
इसलिये बाहर है
बाजारू संस्कृति से।

क्या फ़र्क पड़ता है
टूटे दिलों के नग्मों से
विके हुए वयानों से
लाभ और मुनाफ़ा
साख है
वाजारु संस्कृति की।
क्या फ़र्क पड़ता है
किसी की साँस टूटने से और
किसी की विकने से।



यह कैसा शहर है?

यह कैसा शहर है?
मधुमक्खियों से
टपक रहा ज़हर है।
साधुओं के भेष में
शातिर शिकारी
तस्कर-सा लगता
हर एक भिखारी
यह कैसी दोपहर है
यह कैसा शहर है?

सजा-याफ्ता के घर दिवाली
हरिश्चन्द्र को देते गाली
काँटे यहाँ करते किलकारी
फूलों के घर बैठी कंगाली
यह कैसा सफर है
यह कैसा शहर है?

मंदिर में मयखाना झूमे
मयखाने में पूरा थाना।
भरी कचहरी होती हत्या
अस्पताल में बूचड़खाना
यह कैसा मंजर है
यह कैसा शहर है?

बोलो मत जुबाँ कटती है
डाकू को डिग्री मिलती है
जितना बड़ा करे घोटाला
उतनी अधिक साख बढ़ती है
यह आज की ताजा खबर है
यह कैसा शहर है?



तुमने बहुत परेशान किया

न आई तू
तो परेशान था
किस गाँव गली
चली गई
किस घर थम गई
किस आँगन को
लगी सँवारने
किस छत पर लगी
वस्त्र करने गीले
चिंता में धधकने लगी
मेरी धमनियाँ
आखिर इन्सान हूँ
प्रतीक्षा करते करते
आँखें सूजने लगी
न आई तू
तो ज़िन्दगी लगने लगी
रेत का समंदर
और
आई भी तो
परेशानियाँ बढ़ने लगी
थोड़ी-सा थिरकन से
छतें चूने लगीं
ओढ़ने बिछाने की
किल्लत होने लगी

बच्चों को जुखाम
पत्नी को खाँसी
बैठ गया पूरे घर में ज्वर
फैलने लगा प्लेग
वीरान हुआ शहर
दहशत में लोग
मुनाफ़े के गिद्धों में
लगी होड़
इस बार भी
बहुत परेशान किया तुमने
सब हैरान
राज है खुशहाल
जन है परेशान
न तुम्हें जाने को कहूँ
न तुम्हें रोकूँ
हम बहुत हैं गमगीन
आने वाले दिन बहुत संगीन।
इस बार
तुमने बहुत परेशान किया बारिश।

मेरे बाद

पीड़ा की पहाड़ियों के बीच
खड़ा मैं
उस ओर
मानसरोवर में खिले
नीलकमल की चाह में
ऊँचाई को नापते-नापते
थक गया हूँ
आधी उम्र
पिघल गई पर्वतों को
लाँघते लाँघते
कहीं भी नद- नाला
या कोई स्रोत
सुख का नहीं दिखा
कुछ मेघों ने
मर्माहत मन को बहलाया
और पहाड़ियों में खो गये
दर्द के देवदास
सामने आ गये
कब सुस्ताया, नहीं मालूम
कब मुस्कराया, पता नहीं
अपने में खोया
नीली झील में खिले
नील कमल की चाहत में
चलता रहा

चलता रहा
कहाँ और कब
खत्म होगी
मेरे पीडित पर्वतों की ऊँचाइयाँ
तन का तेनसिंह
थक रहा है
क्या होगा
जब नहीं रहूँगा मैं
मेरी हंसिनी साधों का
बँधी है जो
नीलकमल से
नीली झील में निर्मल नीर से
मेरे मन में
मेरे बाद
क्या होगा
पीड़ा की अनपढ़ी पोथियों का।

साथ साथ चलना

तुम जिस रास्ते जा रहे हो
जाता है अंधी घाटी की ओर
मैं जा रहा हूँ जिस ओर
उधर नजर आता है सूरज
तुम तोड़ते-मसलते हो फूल-कुसुम
मैं सँवारता हूँ बाग-बगीचे
प्रिया के जूड़े
बच्चों के झूले।

संभव नहीं है दोस्त
साथ-साथ चलना
श्रम से परहेज
सुविधा की सेज
मकसद है तुम्हारा
श्रम की वंदना
शोषण के खिलाफ
उठता है हाथ हमारा
तुम खरगोश
और मैं मृग-शावक।

संभव नहीं है दोस्त
साथ-साथ चलना
तुम घाटियों में भटकते
हीरे-जवाहरातों में सोते

सूरज का स्नेह
हवा का धानी आँचल
नहीं देख पाते
मैं समंदर पार
लहरों के साथ
संगम का सुख और
सृजन की दिशा खोजता
तुम जिस दिशा की ओर जाते
नही होता कोई देश
मुझे हर देश में
मिल जाते दिशा-निर्देश
तुम मुनाफे की मशीन
और मैं
कल्याण का मसीहा
संभव नहीं है दोस्त
साथ-साथ चलना।



ग़ज़ल

जिसे अपना समझा गैर निकला
आँसू अपनी आँख का जहर निकला।

समझा गया जिसे क़रीब अपने
खिलाफ़त में वहीं बदस्तूर निकला।

जिनकी चर्चा थी अमन के पहरेदारों में
उन्हीं की जेब से खूनी खंजर निकला।

बहुत गुमान था जिस पर हमको
वही शख्स चलाता तीर निकला।

बहुत चाहती मुझे सुबह और शाम
घर से उसकी मेरा जनाजा निकला।

उनकी ख्वाहिश थी मैं कुछ बोलूँ
मेरा जुमला उन्हीं के खिलाफ़ निकला।

किस पर करूँ यकीन किसे गैर मानूँ।
यहाँ तो हर सोना मुकम्मल खोटा निकला।



सरगम बिखर जायेगी

दुखती हुई रगों को मत छेड़
सारी सरगम बिखर जाएगी।

घाव जो तुमने दिए
भरे नहीं हरे के हरे हैं
रिसती हुए मवाद को मत पोंछ
उंगलियों पर चिपक जाएगी।

एक खामोशी है साथ
नहीं अकेला हूँ मैं आज
खिल्लियाँ मत उड़ा खामोशी की
सारे शहर में हलचल हो जाएगी।

सोए हुए को सोए रहने दे
सपनों के संपेरे सोये रहने दे
खामोश पड़ी बीन को मत छेड़
सारी फ़िज़ां सॉप-सॉप हो जाएगी।

मौजों की मार से मर्माहत कश्ती
किनारे से बँधी है लुटा के हस्ती
बंद पड़े छिद्रों को मत छू
रिस-रिस पानी से भर जाएगी।

दुखती हुई रगों को मत छेड़
सारी सरगम बिखर जाएगी।



मेरा है

यह जो अँधेरा है
मेरा है
तू क्यों दीप बुझाए बैठी?

मैं अभिशप्त अँधेरा ढोता
सन्नाटे के शिला खंड पर
साँसें गिनता आँसू पीता
कोलाहल से दूर
तू क्यों मुँह फुलाये बैठी?

मैं बीते कल का सपना हूँ
तू सूरज की प्रथम किरण
मैं खोया हुआ हस्ताक्षर हूँ
तू कविता की पहली सिहरन
मैं इतिहास भोगता
तू क्यों आँख भिगोये बैठी?

उजियारा कम उम्र और
सपने होते हैं छोटे
सफ़र बहुत लम्बा है बेटे
सुख के सदा पड़ेंगे टोटे।
मैं तो खोटा खूँटा हूँ
तू क्यों राख रमाये बैठी?

उठ उजाला करना सीख
नई सुबह की खातिर
गुलाब चमेली चुनना सीख
यह जो उजड़ा है
कुबड़ा है
मेरा है
तू क्यों मधुबन से
मुँह चुराये अनबन बैठी?
तू क्यों दीप बुझाये बैठी?



क्योंकि वह ज़िन्दा है

उसकी मौत का
किया गया
एलान भरे दरबार
चाँदी के नगाड़े बजा-बजा कर
तस्वीरें बाँट-बाँट कर
संचार सेवाओं को
खोल-खोलकर
कलम घिस्सुओं ने
विगत को उघाड़ा
पृष्ठ के पृष्ठ रंग-रंग कर
विफलता के।
कफ़न पर
की गई कसीदाकारी
दुश्मन ही नहीं
दोस्तों ने भी की हिस्सेदारी
जश्न मनाये गये
विश्व सुंदरियाँ बुलायी गई
पूँजी के पर लगाये गये
बाज़ार बनाये गये
सुवर्ण मुद्राएँ बाँटी गई
गर्दनें हिलाई गई
प्रचार का प्रभाव
हमराज तक बदल गये
रातों रात

क्या करें किसी गैर की बात
हताश और पस्त हिम्मत थी सारी जमात
सुनकर मौत का एलान
लेकिन वे सब शर्मिंदा हैं
क्यों कि वह अब भी जिन्दा है।
जिन्दा है
मेहनतकशों की आँख में
मुक्ति-चीतों की साँस में
शोषक के ख़िलाफ़
जारी जंग में
क्यूबा के कवियों में
चीन के चितेरों में
वियतनाम के धानी खेतों में
जिन्दा है

लाल चौक की चहल-पहल में
रूस के विंटर-हाल में
ऐसा एलान मत करना आईन्दा
क्योंकि वह अब भी है ज़िन्दा
फ़सल काटते हँसिये में
लौहा कूटते हथौड़े में
जुल्म के ख़िलाफ़
उठी औरत की
बंद मुट्ठियों में
कुर्बानी की राह चलते
नौजवान कदमों में
ज़िन्दगी की
खूबसूरती के वास्ते
यही एक रास्ता उम्मदा है
इसलिए वह अब भी जिन्दा है

जिन्दा है
क्योंकि वह श्रम पर टिके
सामाजिक साम्य का
सपना है
हाथों में जिसके
अमन का परिन्दा है
इसलिये
यह मरा नहीं जिन्दा है
मत करना ऐसा एलान आईन्दा
क्योंकि वह
ज़िन्दा है।



एक भय

एक भय
मारे बैठा है कुंडली
जीवन के आस-पास

कब कहाँ कौन-सा घर
हो जाए श्मसान।

आतंक की आग में
पंजाब और आसाम
धू-धू हो रहा
कश्मीर का शबाब
जर्रा-जर्रा देश का बर्बाद
क्या सोचेगी
पीढियाँ मेरे बाद।
एक भय मारे बैठा है कुंडली
मेरे आस-पास।

दुध मुँहे और झुरियों वाले
सब हैं परेशान
कल हो गये फिर कुछ तमाम
कल होंगे फिर कुछ तमाम
जलती है बस्तियाँ सरेआम
गीता कुरान होते बदनाम
मेहतर से मंत्री तक सब हैरान-परेशान

एक मानव-वम्ब ने
बदल दिया पूरा इतिहास
सभ्यता हुई बदनाम।
एक भय मारे बैठा है कुंडली
जीवन के आस-पास।

खून से लथपथ
लाशो का अम्बार
होगा नहीं बेकार
तवारीख में जुड़ेगा
एक नया अध्याय
गुमराहों को मिलेगा
फिर नया पैगाम।
मेहनतकश आवाम अडिग है
जातियों के सामने
देखना है जोर कितना
कातिलों की बॉह में
रुकेगा नहीं
अव अमन का परचम,
टूटेगा नहीं मनुजता का संगम
अखंड है मेरा दिलो-जिगर
मेरा वतन,
होने न देंगे इसे उदास।
एक भय मारे बैठा है कुंडली
मेरे आस-पास
ले रहा आखिरी सॉस
एक भय जो
बैठा है मेरे आस-पास।



रेत भर

तुम तो किनारा कर गये
उठे हुए ज्वार में
किस दिशा को गये
पता नहीं
मेरे पास
दूसरी कश्ती भी नहीं
खोज सकूँ ज्वार-भाटे में तुम्हें।
अब यह सन्नाटा
सारी उम्र साथ रहेगा
तुम्हारे होने का अहसास
हर पल उफनता रहेगा।
ऐसा अक्सर मुझसे
लोगों के साथ हुआ है
होता रहेगा
भरी दोपहरी में
अँधेरा सूरज को डुबोता रहेगा।
रोशनी की गैर-मौजूदगी
खुभती रहेगी
और इसी सन्नाटे में
किसी दिन सहसा
साँस-सरिता सूख जायेगी
यादों की
रेत भर रह जायेगी।



बीच नदी में

तुम्हें छोड़ते हुए भय लगता है
और बचाना भी संभव नहीं
मैं बीच नदी में
ले आया हूँ तुम्हें
पीठ पर लादे-लादे अतीत।

दूर-दूर तक कहीं भी कोई
नाव, द्वीप, तट, बाँसवन
नहीं दिखता
पानी और पानी
सिर्फ पानी का घेराव
सन्नाटा बुनता समय।

ऐसा नहीं कि
किनारा कभी मिला ही नहीं
अक्सर छिपी हुई काई की
मुलायमियत में फिसलता गया
और बीच नदी में आ गया
तुम्हारे साथ
स्मृतियों का भार उठाये।

घाट-घाट का पानी पीने के बाद
होना सुहाता है
बेघाट बीच नदी में

डूबने का भय नहीं
अपने बूते ही लड़ना पड़ता है
खूंखार मौसम से यहाँ
लड़ाई आमने-सामने होती है
बीच नदी में
खुले आकाश,
बिखरे पानी के बीच
पीछे से नहीं
कोई करता वार,
पानीदार लोग ही
पानी में पानी के लिये
खुलकर करते हैं संघर्ष
और
कायम रहता है वही
जो होता है जितना समर्थ।

मैं बीच नदी में
आ गया हूँ
लादे हुए अतीत
तुम्हें छोड़ते हुए भय लगता है
और बचाना भी संभव नहीं ।



प्रतिरोध करो

सब कुछ विभाजित हो रहा है
त्यौहार, रोशनी, रिश्ते
रंगों की खूबसूरतियाँ
कल के सपने
घर के सब अपने
हृदय की धड़कनें
मौसम के गुलदस्ते
अपनों की स्मृतियाँ
इतिहास की हस्तियाँ
सब कुछ टुकड़े-टुकड़े हो रहा है।

एक विषैला बेगानापन
सड़कों पर छितरा गया है
मंदिर से मस्जिद तक
पड़ौसी की नासमझी
हुक्काम की खुदगरजी
दूर-दराज के गिद्ध
छतों पर मँडरा रहे हैं
पंडित और मौलवी
इतिहास की चक्की में
पीस रहे हैं देश को
दल के दल चमकाते हथियार
दिखाते आँख मेरे देश को
सब कुछ विभाजित हो है।



सीना तान

मेहनत कर मजदूरी माँग
नहीं मिले तो सीना तान।
यह धरती आकाश तुम्हारे
सारे जग के सुख तुम्हारे
अपने हक का हिस्सा माँग
नहीं मिले तो मुट्ठी तान।

नहरों में पानी तू लाता
जंगल को कश्मीर बनाता।
खेतों की फसलों पर नाज
भट्ठी में फौलाद पकाता।
तेरा करतब तेरी शान
सब में अपना हिस्सा माँग
नहीं मिले तो हँसिया तान।

जुल्म खोर जल्लादों को
दूध पिला तू छट्ठी का।
शोषक और शैतानों को
तू नंगी तलवार दिखा।
खुद को कर फौलाद
हथौड़ा हाथों में तू थाम।
श्रम को तू पहचान।

जग से नफरत अमन का साथी,
लूटेरों की तू बरबादी।
तेरा हक, हक की लड़ाई
सबको साथ लिये चल साथी।

अपनी पातें लम्बी कर
अपना सीना ताल।
मेहनत कर मजदूरी माँग।
नहीं मिले तो सीना तान।



बोल भाई बोल

बोल भाई बोल
सरल भाई बोल
साफ-साफ बोल
रोज-रोज बोल।

गाँव-गली शहर में
मौहल्ले-चौपाल में
संसद में सड़क पै
नेता के बंगले पै
अफसर की कोठी में
महँगाई की मार और
कांड दर कांड
बार बार खोल।

गोली से गोले से
साधु के झोले से
आदम की सेना से
लग रही आग
बढ़ रहे श्मसान,
झुलस गया रामलाल
बिलखता रमजान।
पोथी औ पुराण से
लिपटी इस लाट की
पोल-पोल खोल।
नूरिये-जमालिये की

चतुरी-चमरान की
राधे की बिटिया को
रघुवा के बेटुआ को
ज़िन्दा जलाया जावे
सारा गाँव हार जावे
कैसा यह राज है
कैसा यह समाज है
कैसी यह सरकार है
खुलम खुल्ला बोल।

धर्मों के नाम पर
पंथों के सवाल पर
नंगी तलवार है
गोली आरमपार है।
आतंक के राज को
हाय-हाय बोल।

माटी के दुश्मन को
मुरदाबाद बोल
एकता के बैरी को
राम नाम सत बोल
धर्म के ढोल की
पोल सारी खोल
बोल भाई बोल

पुरखों की जागीर को
साँझी तस्वीर को
आपस की खीर को
श्वान सारी सरहद के
ताक रहे चाव से।

महापौर चुप क्यों?
कैसा यह खेल है।
अवसर की ताक में
बैठा बूढ़ा शेर है।
चौतरफा वार कर
सब को आवाज दे
सारे फ्रंट खोल दे।
गोपनीय गठबंधन की
गाँठ-गाँठ खोल
पोल सारी खोल।
बोल भाई बोल
सरल भाई बोल।
रोज-रोज बोल।



खुले खुले हैं द्वार

खिड़कियाँ दरवाजे
बंद पड़े कमरे
यहाँ तक कि पिछवाड़ा भी
खोल दिया है एक साथ
कितना खुला-खुला है घर
कितनी उदार और लोचदार हूँ मैं।
पलक-पाँवडे बिछाये
बैठी हूँ सिंहद्वार
''बेगा पधारोनी बादीला भरतार''-
बाँदियाँ गाती हैं दिन-रात
कोई रुकावट नहीं है देव !
खुले हैं द्वार सदैव।

एक अंधा बाप है
चौखट के कौने में
बैठा अपने आप है
मंदिर पे मरता
अतीत में जीता है।
माँ जो बहरी है
अगले जन्म के लिये
जपती है माला
भीतरी हिस्से में लेटी है।
एक गबरु भाई है
पीटता है कारखाने में हथौड़ा

उसी का डर है थोड़ा।
दूरदर्शन से रिझा लूँगी उसे
झुनझुने थमा दूँगी उसे
जो तुम भेज दोगे
हवाई मार्ग से मुझे
तुम बस झूमते हुए आओ
परदेशी बालम!
स्वदेशी भैया के साथ
बाट जोहती हूँ दिन रात
खिड़कियाँ दरवाजे
खोल दिये हैं एक साथ।
तुम जानते हो दिलदार!
मैं मालदार और मांसल
सोने की खान
चाँदी की फुलझड़ी,
अक्सर उपग्रह से आते हैं
प्रेम-पत्र तुम्हारे
कभी कभी फैक्स भी आता है
दे जाता है बैंक हलकारा
यदा-कदा झाँक जाते हो
जेट से या मारुति से तुम भी
मन मोह लेते हो बाँकी अदा से।
रुकते नहीं
थकते नहीं
क्यों डरते हो बाँके सैयाँ?
मेरा मन-मोहन तो तुम्हारा ही है।
यह मन-सदन उसका है
असरदार उसका हर एक जुमला है।
"घर तो कमेरों का है
बस्ती लुटेरों की है"-

दीवार पर लिख गया
गबरू कारखाने वाला भाई,
जाते-जाते मोहल्ले की
महिलाओं को दिखा गया दीवार
तब से इधर आते हुए
डरता है तुम्हारा नाई,
फँसा है हवाले में जो भाई।
कब से बैठी हूँ
प्रतीक्षा में साँई!
आकर करो उद्धार
मैं हूँ तुम्हारी कर्जदार।
खोल दिये हैं
एक साथ सारे द्वार
है कोई ऐसा उदार
संसार में मेरे सरदार?

मैं तो दर्पण हूँ

मुझ से क्यों नाराज
मैं तो दर्पण हूँ।
जो जैसा है वैसा ही दिखता है,
काला काला,
गोरा गोरा ही दिखता है
निर्वस्त्र को सवस्त्र
सजे-सँवरे को नंगा नहीं दिखाता
मैनका हो या मंथरा,
जो जैसा है उसे वैसा बताता हूँ
मैं तो एक समर्पण हूँ
मुझ से क्यों नाराज
मैं तो दर्पण हूँ।

जो कुरुप हैं उन्हें सुन्दर नहीं बताता
गद्दारों को देश भगत नहीं बताता
शोषक को शोषक, शोषित को शोषित
दूध को दूध पानी को पानी कहता
मेरा धर्म जो जैसा वैसा उसे दिखाता।
मैं तो दर्पण हूँ
अपना धर्म निभाता
मुझे से क्यों नाराज
मैं तो दर्पण हूँ

राजा हो या रंक, नेता हो या जन,
सब को खोल-खोल रखता हूँ

हूलिया और हवाला सरे आम करता हूँ
कल तू सुन्दर था मैं सुन्दर था
आज झुर्रियाँ चेहरे पै
मैं कुरूप हो गया क्यों?
मैं तो कल भी हँसता था
अब भी हँसता हूँ
मुझ से क्यों नाराज
मैं तो दर्पण हूँ।

मेरा पानी मेरा है
मैं सब का पानी दिखलाता
मुझ को तोड़ दिया तो
तुम टुकड़ों में बँट जाओगे
मेरा क्या, मैं तो
बना रहूँगा दर्पण ही टुकड़ों में
मुझ से क्यों नाराज
मैं तो सब का अन्तर्मन हूँ
मैं तो दर्पण हूँ।

तुम रोते तो मैं रोता हूँ
तुम हँसते तो मैं हँसता हूँ
तुम मुझ में हो
मैं तुझ में हूँ
फिर क्यों दूरी आज
सचाई पर टिका हुआ है
मेरा सरगम, मेरा साज।
मुझे से क्यों नाराज
मैं हूँ तेरा हमराज
मैं तो दर्पण हूँ
मुझ से क्यों नाराज?
ॐ

हिन्दुस्तान हमारा है

आजादी की रक्षा करना
अमर शहीदों का नारा है
हिन्दुस्तान हमारा है
हिन्दुस्तान तुम्हारा है।

फिर फिरंगी वेश बदलकर
आने को तैयार हैं
नई नीतियों के नक्शे में
नेता सब लाचार हैं
देश बेचने वालो सुनलो
भारत छोड़ो नारा है
हिन्दुस्तान हमारा है।

सुरसा-सी बढ़ती महँगाई
पढ़े-लिखे बेकार हैं
छँटनी की चलती है छुरियाँ
जीना भी दुश्वार है।
करना रक्षा जीवन की
जीवन हमको प्यारा है
हिन्दुस्तान हमारा है।

सीमा पर शैतान खड़े हैं
आँगन में है फैली आग
तेली दोनों ओर खड़े हैं

जाग मजूरे जाग।
देश को बचाना है
वक्त ने पुकारा है
हिन्दुस्तान हमारा है।

बंदूकों में लोकतंत्र है
घोटालों में शेर
धर्म बना धोखे की टट्टी
तंत्र हो रहा ढेर
लोकतंत्र की रक्षा करना
संविधान का नारा है
हिन्दुस्तान हमारा है।

उठो भगत, आजाद उठो
सारा देश पुकारे
बापू की पूजा करते हैं
बापू के हत्यारे।
आजादी खतरे में साथी
इसको आज बचाना है
हिन्दुस्तान हमारा है।

दीप-शिखा

भरी दुपहरी
सूरज डूबा
फिर भी
अँधेरे के आगे
मेरा शीश नहीं झुका।
घर में मेरे
अनजली मशालें
कई पड़ी थीं
मैं रोशनी का बेटा
मुझे किसी अँधेरे के आगे
झुकने की क्या पड़ी थी
अभी अनजली
मेरे हाथों निर्मित
मार भगाने अँधियारे को
जलने को
दीप-शिखा तैयार खड़ी थी।
एक अकेली दीप-शिखा से
सारा आँगन जगमग-जगमग
कोई सूरज मुझे बताये
क्या है उसका अन्तर्द्वन्द्व
जिससे जगमग मेरा घर।
ओ मेरी दीप-शिखा,
जा किसी के सूने आँगन
कुंडली मारे बैठा हो

कोई एक अँधेरा
गुप-चुप
उस आँगन को कर दे जगमग।
जलना तभी
सार्थक होता
जब औरों का भी घर
जगमग होता।
ओ मेरी दीप-शिखा,
भीतर से बाहर तक
जलते हुए
जगाना सबको
लक्ष्य बने सदैव तुम्हारा
जा किसी सूने आँगन
ओ मेरी
अलबेली दीप शिखा!



प्रहसन

नाथों के नाथ
वंद किए किंवाड़
संगीनों के साये में
सोये थे।
धँसी हुयी आँखें
फटेहाल लाचार
बाहर एक अनाथ
बाँधे हुए हाथ
प्यासा और भूखा
दर्शन का भूखा
करता इन्तजार
जय नाथों के नाथ की
करता हर पल ध्यान।
सहसा खुला सिंहद्वार
कंठी-डोरा डाल
ले गये दरबार
दर्शन कराये और
लात मार फैंक दिया
मंदिर के बाहर,
पुष्कर के पानी से
धोया गया गर्भ-द्वार
तुलसी-गंगाजल के छींटे पड़े
यत्र-तत्र,
अद्भुत यह दृश्य था

नेपथ्य में
नायक का उठा
वरद हस्त था।
बच गई नाक
प्रगति की आज
भूखा अनाथ
पसारे हुए हाथ
कुनबे सहित
खड़ा था अब भी
प्रभु के द्वार
परलोक सुधारने
अगले किसी प्रहसन का
करता इन्तज़ार
जय नाथों के नाथ की।



संबंध

संबंध टूटते नहीं
बनते हैं संबंध
एक बार
बस एक बार।
आदमी की अस्मिता के
फूल और गंध के
प्यास और पानी के
जीने की आशा के
संबंध टूटते नहीं
बनते हैं संबंध
एक बार
बस एक बार।
माँ की ममता के
प्रेमिका के
पत्नी के
भाई और बहन के
निजता के, समर्पण के
संबंध बनते हैं
एक बार
बस एक बार
टूटते नहीं
टूटती है
जड़ता
अहम की अखंडता

ना समझी से उपजी अज्ञानता
एक बार बस एक ही बार
होता है कोई किसी का बेटा
किसी का भाई, किसी का दोस्त
रहता है
इतिहास में बस वैसा का वैसा

संबंध कमल नाल है
देह की साँस है
मेंहदी का रंग
अपनों का संग है
देह का रंग और
अपनों का संग छूटता नहीं
बनता है संबंध
एक बार
बस टूटता नहीं।

मैं जो हूँ तुम्हारा
तुम्हारा ही रहूँगा
मानो चाहे न मानो
संबंधी बना रहूँगा
जो हो चुका हूँ एक बार
संज्ञा जो बन गई एक बार
नाम जो मिल गया रिश्तों को एक बार
टूटता नहीं
संबंध बनते हैं
टूटते नहीं बार-बार
हवा की तरह
तैरते रहते हैं
बने हुए संबंध

रंगों की तरह
पीछा करते हैं
संबंध
भागते हुए आदमी का।
संबंध
हाथ की बनी
आग में पकी रोटी है
खाना ही पड़ता है जिसे
क्योंकि वह होती अपनी है
फैंकने वाले
होते है श्वान
आदमी नहीं होते
बनते है संबंध
जिसकी अस्मिता के
फूल और गंध के
पानी और प्यास के
संबंध टूटते नहीं
बनते हैं
बस एक बार
सिर्फ एक बार।



जल

एक पत्थर
और फैंका
ताल का जड़ जल
हिला नहीं, डुला नहीं
पोखर में प्रतिबद्ध
स्वयं से आबद्ध
खुद से लड़ा नहीं
भीतर से गुमसुम
घाटों से घिरा
मुखरित हुआ नहीं
निर्मलता मर गई
स्वच्छता घट गई
अब नहीं होती हलचल
खिलता नहीं
कोई कमल।
एक पत्थर और फैंका
ताल का जड़ जल
हिला नहीं, डुला नहीं
पोखर से प्रतिबद्ध
भीतर से खुला नहीं
खिला नहीं जल।



हरा-भरा मैं

सब ने किया बाहर
रहा अकेला भीतर
पर भरा-भरा।
चाहत सब को बाहों में भरने की
आसमान से सीने में रखने की।
पर सब ने किया किनारा
रहा भँवर में न्यारा
पर भरा-भरा।
भरी सभा में विदुर-वेदना
कुंद हो गई सजग चेतना
चीर-हरण मेरी पीडा का
देख सभी निस्तब्ध हो गये
सबने किया तिरस्कृत-
रहा अकेला, पर खरा-खरा।
जीने के लिये लड़ना पड़ता है
हर चोट को सहना पड़ता है।
समंदर की बदमिजाजी
मौजों की मसखरी
मल्लाह को मझधार में झेलना पड़ता है।



ज़िन्दा है

क्योंकि वह
जिन्दा है
तड़फड़ाता है
छटपटाता है
फिर भी ज़िन्दा है।
चील के पंजों में
फँसा हुआ साँप
आँख के आँसू-सा टपकता
निःसहाय निर्विकार
फूल की पंखुरी पर अटके
ओस कण-सा
जिन्दा है
तड़फड़ाता
मुस्कराता
धरती का
स्वप्नदर्शी
बंदा हैं,
क्योंकि वह
ज़िन्दा है।

जिंदा है
नाबराबरी के ख़िलाफ
उठे श्रमिक की भुजा-सा
अन्याय के विरुद्ध

धनुर्धर के शर-सा
कुंती की जीवेषणा-सा
अस्मिता के लिये
पुकारती कृष्णा के
खौलते आँसू-सा
सभ्यता के संकट को
झेलता
टूटता-जुड़ता
कान्त-कल्पना का
परिन्दा
अब भी है ज़िन्दा
नहीं है अपने पर
शर्मिन्दा
क्यों कि यह है
ज़िन्दा।





सरल विशारद

जन्म . शरद पूर्णिमा, सन् 1938
शिक्षा : एम ए पूर्वार्द्ध (हिन्दी)
अर्द्ध साहित्य-रत्न, पूर्ण विशारद
रचनाएँ · ज्ञानोदय, वातायन, कल्पना, गीत, माध्यम, मधुमती तथा प्रदेश-देश की पत्र-पत्रिकाओं मे यदा-कदा प्रकाशित।
सम्पादन. वातायन, आज की कविता (हरीश भादानी, डॉ पूनम दैया के सपादकत्त्व मे) संकल्प-मच (नाट्य-पत्रिका)
प्रकाशनः खामोशी के रग (कविता संग्रह)
मुद्रणाधीन कृतिया : (1) बोलो मत खतरा हे (2) माथै रो चैम (राजस्थानी)
सम्प्रति · मुद्रण कार्य से सम्बद्ध

सद्य प्रकाशित ·
क्योंकि वह जिंदा है
[कविता सग्रह]